Vol.9 May'16 No.10
Annual Subscription : Rs 100
Rs. 10/- per copy

ब्रह्मार्पण
BRAHMARPAN

वेदोऽखिलो धर्ममूलम्

A Monthly publication of Brahmasha India Vedic Research Foundation

Brahmasha India Vedic Research Foundation
ब्रह्माशा इंडिया वैदिक रिसर्च फाउन्डेशन

स्वागत है नव सम्वत्सर

-शिवअवतार सरस

हिन्दी-हिन्दू हित चिन्तन में, स्वागत है नव सम्वत्सर।।
संस्कार-संस्कृति चर्चा का मिला आज अनुपम अवसर।
सृष्टिसृजन का आदि-दिवस है, हुआ राम का था अभिषेक।
धर्मराज ने गद्दी पायी, शकहूणों का हुआ विनाश।।
वेद पढ़े फिर दयानन्द ने, किया स्थापित आर्यसमाज।
लिखे वेद के भाष्य दिया था, बृहद् ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश।।
'राष्ट्र' धर्म के संरक्षण को, हुए आज ही हम तत्पर।
हिन्दी-हिन्दू हित चिन्तन में, स्वागत है नव सम्वत्सर।।

पतझड़ बीता ऋतु बसन्त में, होली-होला है खेला।
नवल-वर्ष में नवल-हर्ष से, जुड़ा आज अद्भुत मेला।।
नये वर्ष में सब नवान्न से रचें रचाएँ रंगोंली।
होम-हवन-यज्ञादि करें, शुभ, अग्निहोत्र से हो होली।।
सिंहनाद कर बिगुल बजा दें, गूँज उठे धरती अम्बर।
हिन्दी-हिन्दू हित चिन्तन में, स्वागत है नव सम्वत्सर।।

सम्वत् उन्नीस सौ छियालिस में जन्म लिया था हेडगेवार।
आर.एस.एस. संस्थापन द्वारा किये स्वयं सेवक तैयार।।
बिन संगठन नहीं सुरक्षा, भय से अरिदल दूर भगे।
इसीलिए यह बनी कहावत-संघे शक्ति कलौयुगे।।
आँख तीसरी खोल उपस्थित होंगे निश्चित प्रलयंकर।
हिन्दी-हिन्दू हित चिन्तन में, स्वागत है नव सम्वत्सर।।

मालती नगर, मुरादाबाद (उ.प्र.)

चैत्र शुक्ल प्रतिपदा विक्रमी संवत् 2073 तद्नुसार शुक्रवार 8 अप्रैल 2016 को सभी ब्रह्मार्पण के पाठको को नवसंवत्सर की शुभकामनाएँ।

Brahmarpan Mayl' 16 Vol. 9 No.10
बैशाख-ज्येष्ठ 2072-73 वि.संवत्

ब्रह्मार्पण
BRAHMARPAN

A bilingual Publication of Brahmasha India Vedic Research Foundation

CONTENTS

1. स्वागत है नव सम्वत्सर 2
-शिवअवतार सरस
2. संपादकीय 4
मनुस्मृति का विरोध क्यों?
3. सांख्य दर्शन 7
-डॉ. भारत भूषण
4. कैसा होगा रामराज्य? 8
(रामनवमी पर्व पर विशेष)
-नरेन्द्र सहगल
5. प्रभो! हमें निर्भय कर दो! 14
-महात्मा चैतन्यमुनि
6. महर्षि कपिल 19
7. जब अन्तःकरण शुद्ध हुआ 21
-महात्मा आनन्द स्वामी
8. शहीद खुदीराम बोस ने गीता लेकर चूमा फन्दा 22
-शिव कुमार गोयल
9. जलियाँवाला बाग का रोमांचक दृश्य 26
-स्व. ज्ञानी पिण्डीदास
10. हिन्दुत्व और स्वातन्त्र्य समर के उद्गाता लाला लाजपतराय 31
-डॉ. भवानीलाल भारतीय
11. Reminiscences of a soldier of the Indian National Army (Tek Ram) 35
-B.D. Ukhul

BRAHMASHA INDIA VEDIC RESEARCH FOUNDATION

C2A/58, Janakpuri,
New Delhi-110058
Tel :- 25525128, 9313749812
*email:*deeukhal@yahoo.co.uk
brahmasha@gmail.com
Website : www.thearyasamaj.org
of Delhi Arya Pratinidhi Sabha

Sh. B.D. Ukhul
Secretary
Dr. B.B. Vidyalankar 0124-4948597
President
Col.(Dr.) Dalmir Singh (Retd.)
V.President
Dr. Mahendra Gupta *V.President*
Ms. Deepti Malhotra
Treasurer

Editorial Board
Dr. Bharat Bhushan Vidyalankar, Editor
Dr. Harish Chandra
Dr. Mahendra Gupta
Acharya Gyaneshwararya

लेख में प्रकट किए विचारों के लिए सम्पादक उत्तरदायी नहीं है। किसी भी विवाद की परिस्थिति में न्याय क्षेत्र दिल्ली ही होगा।

Printed & Published by
B.D. Ukhul for Brahmasha India Vedic Research Foundation
Under D.C.P.
License No. F2 (B-39) Press/ 2007
R.N.I. Reg. No. DELBIL/ 2007/22062
Price : Rs. 10.00 per copy
Annual Subscription : Rs. 100.00

संपादकीय

मनुस्मृति का विरोध क्यों?

8 मार्च को जवाहरलाल नेहरु विश्वविद्यालय में कुछ विद्यार्थियों ने सामाजिक और धार्मिक महत्व रखने वाली मनुस्मृति को जलाने का अशोभनीय कार्य किया। उनका कहना था कि 8 मार्च महिला दिवस के रूप में मनाया जाता है इसलिए उस दिन मनुस्मृति के उन हिस्सों को जलाया गया जहाँ महिलाओं के विरुद्ध आपत्तिजनक बातें लिखी थीं। यह उनका प्रतीक रूप में विरोध/प्रदर्शन है। ज. ने. वि. में प्रति वर्ष दिसंबर में मनुस्मृति को जलाया जाता है। सबसे पहले सन् 1927 में बी. आर. अम्बेडकर ने मनुस्मृति को जलाया था। उसके बाद से ऐसा प्रतिवर्ष होता आ रहा है। इस वर्ष इस अवसर पर स्टूडेंट यूनियन के प्रेसिडेंट कन्हैया कुमार और खालिद उमर आदि ने अन्य लोगों के साथ मिलाकर हिन्दू धर्म और ब्राह्मण विरोधी नारे भी लगाए। इसके विरुद्ध कुछ विरोधी छात्रों ने न्यायालय में एफ.आई.आर. भी दर्ज कराई है। कुछ अम्बेडकर के समर्थक लोग जिन्होंने संभवतः मनुस्मृति को पढ़ा तक भी नहीं होगा। वे इसे जातिवाद का ग्रंथ कहते हैं। वस्तुतः मनुस्मृति उस काल की रचना है जब जन्मना जाति व्यवस्था के विचार का कोई अस्तित्व ही नहीं था। महर्षि मनु ने मनुष्य के गुण, कर्म और स्वभाव पर आधारित समाज व्यवस्था की स्थापना की थी। इसलिए मनु को जातिवाद का पोषक कहना अज्ञान का सूचक है।

मनुस्मृति को नीति और धर्म, न्याय व्यवस्था (कानून) का निर्धारक सृष्टि का पहला ग्रंथ माना जाता है। मध्यकाल में भारत के प्रायः अनेक प्राचीन ग्रंथों में दुष्ट लोगों ने प्रक्षेप

(मिलावट) करके महर्षि मनु को जातिवादी और नारी जाति से भेदभाव करने वाला बना दिया जबकि मनुस्मृति में नारियों को समाज में समादरणीय स्थान देने का कथन है; वहाँ कहा है-

1. यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः।
यत्रैतास्तु न पूज्यन्ते सर्वास्तत्राफलाः क्रिया।। (3/56)

2. तस्मादेताः सदा पूज्या भूषणाच्छादनाशनैः।
भूतिकामैर्नरैर्नित्यं सत्कारेषूत्सवेषु च।।(3/59)

मनु ने वेदों के अनुसार स्त्रियों को यज्ञोपवीत धारण करने, यज्ञ करने, वेदों का अध्ययन करने का अधिकार दिया। मनु के अनुसार स्त्रियों को पुरुषों से बढ़ कर सम्मान दिया जाना चाहिए। स्त्री गृहस्वामिनी है और सबके आदर की पात्र है। आज से 150 वर्ष पूर्व महर्षि दयानन्द ने यह सिद्ध कर दिया था कि मनुस्मृति में प्रक्षेप (मिलावट) की गई है। अतः इससे यह लगने लगा कि मनुस्मृति वर्ण व्यवस्था का नहीं अपितु जन्मना जातिवाद का समर्थन करती है।

मनुस्मृति के अनुसार मानवजाति का विभाजन चार वर्णों में किया गया है। ये वर्ण हैं। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र। वरण करने के कारण इन्हें वर्ण कहते हैं। वर्ण शब्द 'वृञ् वरणे' धातु से बनता है। ब्रह्मचर्याश्रम में शिक्षा समाप्त करने के पश्चात् विद्यार्थी (ब्रह्मचारी) अपनी रुचि तथा गुण, कर्म और स्वभाव के अनुसार अपने वर्ण का चयन करता था अर्थात् भविष्य में वह ब्राह्मण (अध्ययन-अध्यापन), क्षत्रिय (देश की आन्तरिक और बाहरी शत्रुओं से रक्षा) या वैश्य (कृषि, व्यापार आदि) कौन-सा कार्य करेगा। जो व्यक्ति पढ़-लिख नहीं सकता था वह समाज के अन्य वर्गों की सेवा अर्थात् मज़दूरी आदि शारीरिक श्रम के कार्य करेगा। मनु के अनुसार मनुष्य जन्म से शूद्र होता है और बाद में शिक्षा, दीक्षा, सामाजिक व्यवहार, सदाचार और शुभकर्मों से

वह ब्राह्मण, क्षत्रिय आदि के गुणों को ग्रहण करता है। कहा भी है–

'जन्मनाः जायते शूद्रः संस्काराद् द्विज उच्यते।'

इसी संदर्भ में आगे कहा है–

'शूद्रो ब्राह्मणतामेति ब्राह्मणश्चैति शूद्रताम्।
क्षत्रियाज्जातमेवन्तु विद्यात् वैश्यात्तथैव च।" (मनु. 10/65)

अर्थात् शूद्र के रूप में उत्पन्न मनुष्य अपने सत्कर्मों से ब्राह्मण बन सकता है और ब्राह्मण यदि अपने योग्य उत्तम कर्म नहीं करता है तो वह शूद्र बन जाता है। यही बातअन्य वर्णों पर लागू होती है। प्राचीन काल में बहुत-से मनुष्य क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र के कुल में उत्पन्न हो कर तथा वेदादि शास्त्रों का ज्ञान पाकर ब्राह्मण हो गए और ऋषि-मुनि बन गए जैसे सत्यकाम जाबलि, वशिष्ठ, विश्वामित्र (चंडाल पुत्र), वेदव्यास, मतंग, ऐतरेय (दासी पुत्र) आदि, ऋषि बन गए। ऐसे बहुत से उदाहरण हैं जहाँ निम्न श्रेणी के व्यक्ति ऊँचे वर्ण के हो गए और उच्च गृह में जन्म लेकर रावण, कंस आदि राक्षस बन गए। आज भी समाज में सर्वश्री मुरारी बापू, सत्यपाल महाराज, साध्वी ऋतंभरा, सुधांशुजी, मुनीश्वरानंद, स्वामी रामदेव, स्वामी सत्यपतिजी, महेन्द्रपाल जी ने के अपने गुण, कर्म और स्वभाव के कारण उच्च प्रतिष्ठा प्राप्त की है। इनके अतिरिक्त बाबूलाल गौर गृहमंत्री, साध्वी उमा भारती केन्द्रीय मंत्री, डॉ. गौरी शंकर, शंकरदेव विद्यालंकार, डॉ. अम्बेडकर, और जगजीवन राम प्रतिष्ठित मंत्री पद पर आसीन रहे। इस प्रकार कितने ही शूद्र अपने संस्कारों के कारण उच्च वर्ण में आ गए और कुछ द्विज शूद्रत्व को प्राप्त हो गए। अन्त में हम डॉ. सुरेन्द्र कुमार, कुलपति गुरुकुल कांगड़ी वि. वि. का धन्यवाद करना चाहेंगे जिन्होंने 'विशुद्ध मनुस्मृति' का संपादन कर प्रक्षिप्त अंशों की ओर संकेत किया और उसका शुद्धीकरण किया।

सांख्य दर्शन (अध्याय-1, सूत्र-100)

-डॉ. भारत भूषण विद्यालंकार

महत् आदि की कार्यता निश्चित हो जाने पर उनके पूर्वोक्त हेतुमत्व आदि साधर्म्य सर्वथा युक्त हैं। महत् आदि के हेतुमत होने पर अब निर्बाध रूप से उनके उपादान हेतु का अनुमान किया जा सकता है। इसी आशय से सूत्रकार अगले सूत्र में कार्य द्वारा मूलकारण के अनुमान का प्रसंग प्रारंभ करता है, सूत्र है-

कार्यात् कारणानुमानं तत्साहित्यात्।।100।।

अर्थ- उस (कार्य) के (कारण में) समावेश से (कार्यात्) कार्य से (कारणानुमानम्) कारण का अनुमान होता है। 68वें सूत्र में 'सामान्यतोदृष्ट अनुमान' द्वारा पुरुष और प्रकृति के अस्तित्व को सिद्ध करने का उल्लेख किया है। पर 'सामान्यतोदृष्ट अनुमान' का ऐसे स्थलों में भी प्रयोग होता है, जहाँ साध्य और साधन का परस्पर कार्य कारणभाव या उपादान-उपादेय भाव नहीं होता। जैसे-प्रकृति या प्राकृत पदार्थों की परार्थता से चेतन-आत्मा का अनुमान किया जाता है। क्या महत् आदि से प्रकृति का 'सामान्यतोदृष्टअनुमान' इसी तरह का है? इस सूत्र द्वारा सूत्रकार का कहना है कि यह अनुमान ऐसा नहीं है, जहाँ साध्य-साधन का परस्पर कार्यकारणभाव न हो। क्योंकि महत् आदि की कार्यता अभी विस्तार से सिद्ध की जा चुकी है। इसलिए यहाँ 'कार्यसाहित्य' हेतु से, महदादि कार्य से उसकी उपादानभूत प्रकृति का अनुमान होता है।

सूत्र के 'तत्साहित्य' हेतु में यह भाव अंतर्निहित है। लोक में देखा जाता है कि मिट्टी का विकार घड़ा या घर आदि का मिट्टी में और सोने के विकार कुंडल और कड़े आदि का सोने में लय हो जाता है। मिट्टी या सोना इन कार्यों के कारण हैं। ऐसे ही सारे भूतों का लय उनके कारण सूक्ष्मभूत अर्थात् तन्मात्रों में हो जाता है। तन्मात्र और सारी बाह्य तथा आन्तर इंद्रियों का लय अहंकार में हो जाता है। अहंकार इन सबका कारण है। अहंकार का लय महत् में हो जाता है। इस प्रकार वह अपने कारण महत् को सिद्ध करता है। इन सारे कार्यों को अपने अन्दर समेटता हुआ महत् कार्यअपने उपादान प्रकृति में लीन होकर उसकी कारणता को सिद्ध करता है। इस प्रकार कार्य की अपने कारण में लीन होने की परंपरा 'कार्य साहित्य' है। इससे महदादि कार्य मूल प्रकृति के अनुमान कराने वाले होते हैं।।।100।।

कैसा होगा रामराज्य?
(रामनवमी पर्व पर विशेष)

–नरेन्द्र सहगल

मध्य युग में घोर अत्याचारी और निरंकुश विधर्मी/ विदेशी शासकों की दासता में पिस रही भारत की जनता को सन्त कवि तुलसीदास ने रामराज्य और श्रीराम के जीवन का परिचय कराकर प्रजा सुख के लिए सत्ता सुख का त्याग और आततायी शक्तियों के संगठित प्रतिकार का पाठ पढ़ाया। रामभक्ति की इस लहर में से छत्रपति शिवाजी और गुरु गोविन्द सिंह जैसे रामभक्त योद्धा उत्पन्न हुए। वास्तव में श्रीराम द्वारा स्थापित रामराज्य की आदर्श व्यवस्था प्रत्येक युग में शासकों और प्रजा के लिए मार्गदर्शक रही है।

युगानुकूल राज्यव्यवस्था

आज अपने देश की सरकार और प्रजा दोनों के लिए रामराज्य की अवधारणा प्रकाश स्तम्भ का काम कर सकती है। भ्रष्ट और सत्ता लोलुप शासकों का अन्त, आतंकी/नक्सलियों जैसे राक्षसों का संहार और सम्पूर्ण समाज को निरंकुश शासन के विरुद्ध संघर्ष करने की प्रेरणा देने की समयोचित क्षमता रामराज्य के सूत्रों में विद्यमान है। श्रीराम का अवतरण उस युग अथवा कालखण्ड में हुआ था जब मानवजाति हिन्दू, मुस्लिम, ईसाई इत्यादि वर्गों में विभाजित नहीं थी। अतः रामराज्य की अत्यन्त व्यावहारिक व्यवस्था किसी भी पंथ, भाषा, क्षेत्र और जन की प्रतिनिधि न होकर सम्पूर्ण मानव जाति के आदर्श का प्रतिनिधित्व करती है। वर्तमान भारत के सन्दर्भ में प्रखर सांस्कृतिक राष्ट्रवाद का स्थापित पर्याय है रामराज्य।

वोट बैंक की संकीर्ण राजनीति, चारों ओर भ्रष्टाचार का बोलबाला, घपले/घोटालों में व्यस्त मन्त्री, विदेश प्रेरित आतंकवाद, मजहबी तुष्टीकरण, जाति आधारित राजनीति, सामाजिक वैमनस्य और सत्ता लोलुपता की पराकाष्ठा में देशभक्ति, सेवा, समर्पण, त्याग, सौहार्द और निरंकुशता के विरुद्ध संघर्ष का सन्देश है रामराज्य। एक दिन असत्य पर सत्य की विजय निश्चित है,

अधर्म के घोर अन्धकार को चीरकर प्रकाश का आविर्भाव होगा ही। सारे सामाजिक जीवन को नष्ट करने वाली भ्रष्ट व्यवस्थाओं का भी अन्त होगा, यही सन्देश है रामराज्य का।

ध्येय पथ पर अडिग श्रीराम

श्रीराम के जीवन और उनके द्वारा स्थापित राज्यव्यवस्था अर्थात् रामराज्य से भारत की वर्तमान सत्ता केन्द्रित राजनीति का अंत हो सकता है। आम समाज के विचारमंथन को शिरोधार्य करते हुए लोकशक्ति अर्थात् जनता जनार्दन का सम्मान करने के मार्ग में उनके प्राणों से भी प्यारे भ्राता लक्ष्मण का त्याग भी कम नहीं रहा। श्रीराम को अपने राष्ट्रीय कर्त्तव्य से पत्नी, भाई, पुत्र किसी का भी मोह विमुख नहीं कर सका। इस तरह श्रीराम अपने ध्येय पथ से कभी विचलित नहीं हुए।

धर्म की स्थापना, दुष्टों के संहार और सन्त-महात्माओं की रक्षा को अपनी जीवन यात्रा का ध्येय मानकर श्रीराम ने किशोरावस्था में जिस कठोर संकल्प को धारण किया था, वह वर्तमान भारतीय समाज के उन युवकों के लिए प्रेरणा स्रोत हो सकता है जो प्रत्येक प्रकार के व्यसनों, प्रलोभनों और मृगमरीचिकाओं में फँसकर भारत की महान संस्कृति से दूर हटते जा रहे हैं। आज की भौतिकवादी चकाचौंध में अपनी उज्ज्वल परम्पराओं से कटते जा रहे भारतीय युवकों को यदि रामराज्य की मानवी संस्कृति की शिक्षा दी जाए तो निश्चित रूप से भारत के भविष्य को महान बनाया जा सकता है।

निरंहकारी राजा, निष्काम कर्मयोगी श्रीराम

चौदह वर्ष के वनवास के बाद राम को जब राजसत्ता प्राप्त हुई तो उन्होंने अपनी प्रजा और देश विदेश से आए समस्त राजाओं-महाराजाओं के समक्ष रामराज्य के अद्वितीय आदर्शों को ही अपने शेष जीवन का एकमात्र उद्देश्य घोषित किया। मेरा कुछ भी नहीं, जो कुछ भी है वह तो प्रजा का है। मैं तो उसकी थाती की रक्षा एवं सम्वर्धन के लिए नियुक्त एक न्यासी मात्र हूँ।' राज्याभिषेक के समय उनके मुखमंडल पर लेशमात्र भी अभिमान का चिह्न न था। एक निरहंकारी राजा और एक निष्काम कर्मयोगी की तरह उन्होंने अपनी समस्त

सफलताओं का श्रेय अपने साथियों एवं सहयोगियों में बाँट दिया। श्रीराम ने कभी स्वयं को एकमात्र नेता के रूप में महिमा-मंडित नहीं किया। यही उनका आदर्श नेतृत्व कौशल था।

अपने देश में इन दिनों प्रचलित व्यक्ति विशेष पर केन्द्रित दलगत राजनीति से छुटकारा पाने के लिए श्रीराम का आदर्श राजनीतिक व्यवहार दिशा सूचक हो सकता है। आज की राज्यव्यवस्था और दलीय प्रणाली को यदि श्रीराम की समाज केन्द्रित राजनीति की ओर मोड़ा जाए तो राष्ट्रीय राजनीति में निस्वार्थ भाव और समर्पण का प्रादुर्भाव आसानी से हो सकता है। यह तभी सम्भव होगा जब श्रीराम को जाति, पन्थ और क्षेत्र की सीमाओं में न बाँधकर एक राष्ट्रीय महापुरुष के रूप में समझा जाएगा।

प्रजा समर्पित रामराज्य

मनीषी साहित्यकार श्री जैनेन्द्र कुमार ने अपने एक लेख 'राजाराम' में श्रीराम की राजनीतिक मर्यादा का बड़ा सुन्दर विवेचन किया है। 'मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम की आदर्श पुरुषोत्तमता परिवार की सीमा तक ही सीमित नहीं थी। यह सार्वजनिक और राजनीतिक मर्यादा के उत्कर्ष को भी अंकित करती थी। यही कारण था कि भारतीय स्वतन्त्रता संग्राम के नायक महात्मा गाँधी ने भी स्वराज्य की परिभाषा देने के लिए रामराज्य को ही आधार बनाया।' अतः देश में व्याप्त जातिवाद, भाषावाद और क्षेत्रवाद को मिटाकर सभी भारतवासियों को यदि किसी एक सूत्र में बाँधा जा सकता है तो वह है श्रीराम का आदर्श चरित्र। संसदीय प्रजातन्त्र एवं दूसरे प्रकार की राज्य व्यवस्थाओं को देश और समाज के हित में स्थापित करने के लिए भी श्रीराम द्वारा स्थापित मर्यादाओं का अनुसरण करना होगा। श्रीराम के लिए राज्य सत्ता व्यक्तिगत तथा पारिवारिक भोग का साधन न होकर समाज सेवा के लिए की जाने वाली तपस्या थी। राजा और सत्ता सेवा के साधन थे, न कि अथाह धन बटोरने के। रामराज्य की अवधारणा के अन्तर्गत राजपद (वर्तमान भाषा में मन्त्रालय) प्रजा की ओर से राजा को सौंपी गई थाती है। इसलिए इस पद का उपयोग

समाज के लाभ के लिए होना चाहिए न कि घोटालों और घपलों के माध्यम से अपनी तिजोरियाँ भरने के लिए।

सत्तालोलुपता विहीन राज्य व्यवस्था

भारत के राष्ट्रजीवन पर मंडराने वाले संकटों में सबसे बड़ा संकट उसी राजनीति का है जो शासक को उत्तरदायित्व और कर्त्तव्यनिष्ठा की भावना से दूर हटाकर मात्र अधिकारों के साथ जोड़ देती है। बहुमत आधारित लोकतंत्र की सबसे बड़ी त्रासदी यही है कि निर्वाचित नेता जनता का प्रतिनिधि न बनकर स्वामी बन बैठता है।

श्रीराम द्वारा प्रदत्त राजनीतिक मर्यादा में सत्ता के दुरुपयोग की कहीं कोई सम्भावना नहीं। शासक के अधिकारों और कर्तव्यों की परिभाषा को रामराज्य में स्थापित की गई शासकीय मर्यादाओं के प्रकाश में समझा जा सकता है। रामराज्य की राजनीतिक व्यवस्था में स्वार्थ, अहंकार और सत्तालोलुपता के लिए कोई स्थान नहीं। श्रीराम, लक्ष्मण, भरत और सीता के व्यवहार में सहयोग, सहजीवन, सहचिन्तन और सर्वोदय जैसे मानवीय मूल्यों का ही वर्चस्व है। श्रीराम ने रामराज्य की व्यवस्था के सभी आदर्शों को अपने व्यवहार में उतारकर विश्व के समक्ष एक उदाहरण रखा और आदर्श राजा के नाते शासन के सूत्र संभाले।

भारतीयता की सशक्त अभिव्यक्ति

किशोरावस्था में ही महर्षि विश्वामित्र के साथ जंगलों में जाकर भारत के सांस्कृतिक मानबिन्दुओं को देखना, समझना और उनकी रक्षा करते हुए भारत की ऋषि परंपरा के आगे नतमस्तक होना उनके जीवन का आरंभ था। यहीं पर उन्होंने भारत राष्ट्र की सांस्कृतिक अखण्डता को राक्षसी शक्तियों से पूर्णतया सुरक्षित करने का महाव्रत लिया। फिर अपनी सूर्यवंशी क्षत्रिय परम्परानुसार सीता का वरण किया। भारत के धर्मगुरु सन्तों को योजनानुसार पिता के संकल्प की पूर्ति हेतु सत्ता सुख को भी त्याग दिया। श्रीराम ने वनों में जाकर वनवासियों एवं पिछड़ी जाति के निषाद राज केवट को गले लगाकर भाई कहा। पक्षीराज जटायू का स्वयं अपने हाथों से संस्कार करके उसे पिता का सम्मान दिया। भील जाति की

वृद्धा शबरी के चरण छूकर उसे माता कौशल्या कहकर पुकारा। इसी प्रकार पतिता कहलाई अहिल्या को पापमुक्त करके समाज में प्रतिष्ठा दिलाई। इस तरह भारतीय राष्ट्र जीवन के सभी मापदण्डों और सिद्धान्तों की अभिव्यक्ति है श्रीराम का रामराज्य।

पिछड़े वर्गों का उद्धार

आज अपने देश के कई राजनीतिक दल और नेता तथाकथित दलित वर्ग के नाम पर अपनी सत्ता केन्द्रित राजनीति चला रहे हैं। इनके थोक वोट प्राप्त करने के लिए अन्य वर्गों के प्रति घृणा भरी जाती है। पहले ऊँचे वर्गों के मन में पिछड़े वर्गों के प्रति घृणा भरी गई थी और अब इन पिछड़े लोगों के मन में ऊँचे वर्गों के प्रति घोर नफरत भरी जा रही है। हिन्दुत्व की विशाल राष्ट्रीय धारा से तोड़कर वोट बैंक पक्का करने वाले कथित समाज सुधारकों, और सत्ता के लोभी राजनीतिज्ञों को यह बात समझ में आनी चाहिए कि इन कमजोर वर्गों का उद्धार इन्हें श्रीराम की राष्ट्रीय धारा से तोड़कर नहीं, जोड़कर ही किया जा सकता है।

श्रीराम का समस्त जीवन कमजोर वर्गों के उत्थान हेतु समर्पित था। पिछड़े बन्धुओं का उत्थान ही श्रीराम की विस्तृत कर्मभूमि थी। यही वर्ग श्रीराम की समस्त लीलाओं का आधार रहे हैं। इन पिछड़ी जातियों वंचितों, गरीबों, वनवासियों और गिरिवासियों के बिना रामराज्य की समग्रता और पहचान अधूरी है। यदि श्रीराम हमारे राष्ट्रजीवन की चेतना हैं तो यह राष्ट्र जीवन भी इनके बिना अधूरा है। श्रीराम के जीवनादर्श समाज के सभी वर्गों में समरसता भरने की सामर्थ्य रखते हैं। आज वनवासी क्षेत्रों में विदेशों से आए ईसाई पादरी सेवा के बहाने धर्मांतरण कर रहे हैं। नागालैण्ड, मिजोरम की समस्याएँ इसी का सीधा दुष्परिणाम है। इसका समाधान श्रीराम ने बताया है। उन्होंने चौदह वर्ष तक इन्हीं लोगों में रहकर अपनत्व का नाता जोड़ा।

लोकहित और लोकमर्यादा

श्रीराम ने अपने आत्मसंयमी जीवन और अजेय सैनिक शौर्य द्वारा लंका से उठी अधर्म की आक्रमक लहरों को भी रोका।

लंका विजय के पश्चात् वहाँ स्वयं शासन नहीं किया, बल्कि राज्य का दायित्व रावण के भाई विभीषण को सौंप दिया। अयोध्या के सिंहासन पर बैठते समय भी राष्ट्रीय संस्कृति और धर्म का अंकुश स्वीकार किया। लोकहित और लोकमर्यादा पर आधारित राजसत्ता को समाजसेवा और देश रक्षा का साधन बनाकर रामराज्य की सर्वोत्तम आदर्श राज्य व्यवस्था का सूत्रपात किया।

रामराज्य जैसी उच्च कोटि, परन्तु अत्यन्त व्यावहारिक शासन पद्धति और श्रीराम के मर्यादायुक्त जीवन से न केवल भारतीय समाज और राष्ट्र को ही मार्गदर्शन मिला अपितु सारे संसार ने इस अलौकिक और अभूतपूर्व प्रकाश से अपने तमस को दूर किया। भारत को विश्वगुरु का सम्मान दिलाने में श्रीराम के मर्यादा युक्त जीवन का अद्‌भुत योगदान रहा। ये सभी मर्यादाएँ और आदर्श श्रीराम के स्वयं के व्यक्तित्व से कहीं ऊपर भारतवर्ष की महान संस्कृति बन गए।

श्रीराम की पुरुषोत्तमता

आज भी विश्व के अनेक देशों में मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम के चरित्र का जो प्रभाव दिखाई दे रहा है वह भारत राष्ट्र की मर्यादा पुरुषोत्तमता ही है। हमारे राष्ट्र की रामराज्य की कल्पना के विविध आयाम सृष्टि के सम्पूर्ण जीवन को मर्यादित करते रहे हैं। ये आदर्श और जीवनमूल्य राजा राम के पूर्व भी विद्यमान थे। रामराज्य की उत्तम राज्य व्यवस्था और श्रीराम का संपूर्ण जीवन भारतीय संस्कृति और राष्ट्र जीवन का पर्याय हैं। उनके आदर्शों के माध्यम से सारे संसार ने भारत को जाना है और उनके इन्हीं सर्वोत्तम एवं कल्याण-कारक सत्कार्यों से विश्व फिर भारत को जानेगा। स्वामी दयानन्द, स्वामी विवेकानन्द, श्री अरविंद आदि ने अपनी दिव्य दृष्टि से 21वीं सदी में भारतमाता के जिस ज्योतिर्मय स्वरूप को विश्व गुरु के सिंहासन पर शोभायमान किया उसका आधार रामराज्य की पुरुषोत्तमता ही है।

प्रभो! हमें निर्भय कर दो!

-महात्मा चैतन्यमुनि

एक बार हमने एक बालक से पूछा कि बताओ परमात्मा की भक्ति क्यों करनी चाहिए तो उसने तुरन्त उत्तर दिया कि इससे परमात्मा प्रसन्न होते हैं। हमें आर्यजगत् के सुप्रसिद्ध शास्त्रार्थ महारथी पण्डित रामचन्द्र देहलवी का स्मरण हो आया। एक बार उनका शास्त्रार्थ किसी मौलवी से हो रहा था तो पण्डित जी ने मौलवी से पूछा कि आप यह बताइए कि आप रुँकू क्यों करते है अर्थात् इबादत करते समय क्यों झुकते हैं? मौलवी ने कहा कि हम खुदा को आदाब करते हैं अर्थात् आगे झुकते हैं। पण्डित जी ने पूछा किसलिए? मौलवी ने तुरन्त उत्तर दिया ताकि खुदा खुश हो जाए। पण्डित जी ने कहा कि मौलवी जी आप क्या बच्चों जैसी बातें करते हैं। यदि परमात्मा हमारे झुकने से प्रसन्न और न झुकने से अप्रसन्न हाने लगे तो हम तो परमात्मा से भी बड़े हो गए। उसकी प्रसन्नता या अप्रसन्नता हमारे हाथ में हो गई। जब चाहें नमस्ते करके उसे खुश कर दें और नमस्ते न करके उसे दुःखी कर दें। उन्होंने मौलवी को कुरान का उदाहरण देते हुए समझाया कि परमात्मा तो सदा एकरस रहने वाला तथा आनन्दस्वरूप है। वह प्रसन्न हो जाएँगे मगर अल्पज्ञ जीव की इतनी सामर्थ्य कहाँ कि परमात्मा के आनन्द में व्यवधान पैदा कर सके। प्रश्न फिर वही उभरकर आता है कि फिर परमात्मा की उपासना क्यों करें? महर्षि जी कहते हैं कि शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करने के लिए हम परमात्मा की उपासना करें अर्थात् परमात्मा की उपासना से हमें शारीरिक बल प्राप्त होता है, आत्मिक शक्ति प्राप्त होती है और इस शारीरिक तथा आत्मिक बल को प्राप्त करके हम सामाजिक उन्नति कर पाने में भी समर्थ हो सकते हैं।

हम परमात्मा की उपासना करें तो परमात्मा को लाभ होगा ऐसा कुछ नहीं है बल्कि उपासना इसलिए करें ताकि हम स्वयं लाभान्वित हो सकें। परमात्मा मानों एक महान् शक्तिपुंज है और उपासना के द्वारा हम उससे शक्ति ग्रहण कर सकते हैं। महर्षि दयानन्द जी ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका में लिखते हैं ... हे परमेश्वर! आप कृपा दृष्टि से हमको सदा देखिए।

इसलिए हम आपको सदा नमस्कार करते है.....अन्न आदि ऐश्वर्य सबसे उत्तम कीर्ति, भय से रहित और सम्पूर्ण विद्या से युक्त हम लोगों को करके कृपा से देखिए। इसलिए हम सदा आपकी उपासना करते हैं। 'इसलिए साधक परमात्मा से प्रार्थना करता है-

ओ३म् अभयं नः करत्यन्तरिक्षमभयं द्यावापृथिवी उभे इमे।
अभयं पश्चादभयं पुरस्तादुत्तरादधरादभयं नो अस्तु।।
ओ३म् अभयं मित्रादभयममित्रादभयं ज्ञातादभयं परोक्षात्।
अभयं नक्तमभयं दिवा नः सर्वा आशा मम मित्रं भवन्तु।।
(अथर्व. 19-15-5,6)

हे परमात्मा! अन्तरिक्ष लोक हमें निर्भयता प्रदान करें, द्युलोक वा पृथिवी लोक हमारे लिए अभय हों, पश्चिम में वा पीछे, पूर्व में वा आगे, उत्तर में वा दक्षिण में वा नीचे से, हमें निर्भयता प्राप्त हो अर्थात् सब ओर से हम निर्भय बनें। हे अभय प्रभु! हमें मित्र से भय न हो और अमित्र से भी भय न हो, जाने व अनजाने लोगों से भय न हो, दिन और रात्रि सभी कालों में हम निर्भीक हों। सब आशाएँ व दिशाएँ हमारे लिए हितकारी हों।

ओ३म् पाहि नो अग्ने पायुभिरजस्त्रैरुत प्रिये सदन आ शक्नु मा ते भयं जरितारं यविष्ठ नूनं विदन्मापरं सहस्वः।।
(ऋ.1-189-4)

इमां म इन्द्र सुष्टुतिं जुषस्व प्र सु मामव।
उत प्र वर्धया मतिम्।। (ऋ.8-6-32)

हे तेजस्वी जगदीश्वर! हमें पालित करो और हमारे प्रिय हृदय सदन में आकर देदीप्यमान हो जाओ। तेरे स्तोता को निश्चय ही न तो आज और न और किसी समय भय होता है। हे परमात्मा मेरी इस सुन्दर स्तुति को स्वीकार करो। मुझे प्रकृष्टतया शोभन प्रकार से रक्षित करो, मेधा और सुमति को प्रवृद्ध करो।

ओ३म् प्रजापतेरावृतो ब्रह्मणा धर्मणाहं कश्यपस्य ज्योतिषा वर्चसा च।
जरदष्टिः कृतवीर्यो विहायाः सहस्रायुः सकृतश्चरेयम्।। (अथर्व. 17-1-27)

ओ३म् परीतो ब्रह्मणा वर्मणाहं कश्यपस्य ज्योतिषा वर्चसा च।

मामा प्रापन्निषवो दैव्या या मा मानुषीरवसृष्टा वधाय।।
(अथर्व.17-1-28)

सृष्टि के स्वामी द्वारा प्रदत्त वैदिक-धर्म-रूप कवच से ढका हुआ तथा सर्वद्रष्टा परमात्मा की दिव्य ज्योति और तेज द्वारा ढका मैं, जरावस्था तक पहुँचूँ तथा सत्कर्मों को करके मैं धर्मवीर बनूँ, उन्नति के शिखर पर चढ़ूँ, सौ वर्ष से भी अधिक आयु वाला बनूँ और सदा उत्तम कर्म करता हुआ विचरूँ। मैं अब ब्रह्म-रूपी कवच द्वारा सब ओर से घिरा हुआ हूँ और सर्वद्रष्टा की ज्योति तथा तेज द्वारा सब प्रकार से घिरा हुआ हूँ। इसलिए मेरे बध के लिए, मुझ पर छोड़े गए, ऐन्द्रियादिक तथा मानसिक बाणों के प्रहार नहीं होते।

हमें इतिहास में ऐसे अनेकों महापुरुष दिखाई देते हैं जो परमात्मा के रक्षा कवच में स्वयं को सुरक्षित अनुभव करते हुए सदा निर्भय होकर विचरते रहे। योगीराज श्रीकृष्ण जी के जीवन में कितने ही कष्ट आए मगर वे कभी भी विचलित नहीं हुए। यहाँ तक कि दुर्योधन की कुटिलता से भली प्रकार परिचित होने पर भी वे समझौता करने के लिए दुर्योधन के कक्ष में अकेले ही चले जाते हैं।.... महर्षि दयानन्द सरस्वती जी के जीवन में ऐसे अनेक क्षण आए जिनमें साधारण व्यक्ति घबरा जाता मगर वे कभी भी हताश व निराश नहीं हुए। जब काशी के विद्वानों के साथ उनका शास्त्रार्थ होना निश्चित हुआ तो वे अकेले होने के बावजूद भी तनिक भी नहीं घबराए। एक ओर दयानन्द जी अकेले और दूसरी ओर पचासों विद्वान् ही नहीं बल्कि वहाँ का राजा भी उन्हीं विद्वानों की ओर था। महर्षि जी अपनी कुटिया में आत्मिक शक्ति प्राप्त करने के लिए उपासना में बैठ गए तथा उन दिनों उनके साथ रहने वाला ब्रह्मचारी बलदेव शास्त्रार्थ स्थल पर यह देखने के लिए गया कि वहाँ की क्या स्थिति है। वहाँ जाकर उसने देखा कि दूसरे पक्ष वालों ने वहाँ पर कुछ लठैत बुलवा रखे हैं और तय किया है कि यदि आज दयानन्द को हम शास्त्रार्थ में पराजित न कर सके तो उन्हें इन लठैतों द्वारा मरवा दिया जाएगा। ब्रह्मचारी को इस बात का पता चला तो वह घबराया हुआ कुटिया में आया और महर्षि जी के चरण पकड़कर कहने लगा कि भगवन्! आज आप शास्त्रार्थ करने न जाएँ।

महर्षि जी बोले कि ब्रह्मचारी ऐसे घबराए हुए क्यों हो, साफ-साफ बताओ। बलदेव ने कहा कि महाराज वहाँ पर विपक्षी लोगों ने गुण्डे और लठैत बुला रखे हैं तथा उन लोगों ने तय किया है कि यदि वे आपको शास्त्रार्थ में न भी हरा सके तो वे आपकी जीवन लीला समाप्त कर देंगे। राजा भी उन्हीं लोगों में मिला हुआ है। महर्षि जी ने कहा- 'ब्रह्मचारी घबराते क्यों हो, एक मैं हूँ जीवात्मा, एक मेरा रक्षक है परमात्मा और धर्म मेरे साथ है इसलिए मेरा कोई कुछ नहीं बिगाड़ सकता है। 'यह है वह शक्ति जो परमात्मा के उपासक को प्राप्त होती है। यही नहीं जब एक षड्यन्त्र के तहत महर्षि जी को जोधपुर में ज़हर दे दिया गया तथा उस भयंकर ज़हर से उनके पूरे शरीर पर छाले उभर आए तो भी वे मुस्कराते ही रहे। डाक्टरों ने कहा कि इन्हें इस समय इतना कष्ट हो रहा है कि साधारण व्यक्ति तो इस कष्ट से ही प्राण त्याग देता। महर्षि के चेहरे पर दुःख का नामोनिशां तक नहीं... अन्तिम समय में भी वे क्षौर करवाते हैं, गायत्री मंत्र तथा मन्त्रों का उच्चारण करते हैं और यह कहते हुए प्राण त्याग देते हैं कि "प्रभु! तूने अच्छी लीला रचाई, तेरी इच्छा पूर्ण हो। प्रभु के इस परम आस्तिक भक्त को इस धैर्य और साहस के साथ मृत्यु का वरण करते हुए देखकर वहाँ उपस्थित अस्थिरचित्त गुरुदत्त भी सच्चा आस्तिक बन गया था। इसीलिए महर्षि दयानन्द जी सत्यार्थ-प्रकाश में लिखते हैं कि उपासना से-'आत्मा का बल इतना बढ़ेगा कि वह पर्वत के समान दुःख प्राप्त होने पर भी न घबराएगा और सबको सहन कर सकेगा। क्या यह छोंटी बात है? इसलिए परमात्मा की प्रार्थना एवं उपासना से व्यक्ति के भीतर आत्मिक बल प्राप्त होता है तथा वह निर्भय हो जाता है और जीवन में बड़े से बड़ा संकट आने पर भी घबराता नहीं है।

परमात्मा से सदा निर्भयता के लिए प्रार्थना करनी चाहिए मगर केवल प्रार्थना ही पर्याप्त नहीं है। महर्षि दयानन्द जी 'आर्योद्देश्यरत्नमाला' में लिखते हैं- 'अपने पूर्ण पुरुषार्थ के उपरान्त, उत्तम कर्मों की सिद्धि के लिए परमेश्वर वा किसी सामर्थ्य वाले मनुष्य का सहाय लेने को 'प्रार्थना' कहते हैं। 'सत्यार्थप्रकाश' (सप्तम समुल्लास) में महर्षि जी बहुत ही सुन्दर

एवं सार्थक उपदेश देते हुए कहते हैं- 'देखो सृष्टि के बीच में जितने प्राणी है अथवा अप्राणी, वे सब अपने-अपने कर्म और यत्न करते हैं। जैसे पिपीलिका आदि सदा प्रयत्न करते, पृथिवी आदि सदा घूमते, और वृक्षादि सदा बढ़ते-घटते रहते हैं, वैसे यह दृष्टान्त मनुष्यों को भी ग्रहण करना योग्य है। जैसे पुरुषार्थ करते हुए पुरुष का सहाय दूसरा भी करता है, वैसे धर्म से पुरुषार्थी पुरुष का सहाय ईश्वर भी करता है। जैसे काम करने वाले पुरुष का भृत्य करते हैं और अन्य आलसी का नहीं। देखने की इच्छा करने और नेत्रवाले को दिखलाते हैं, अन्धे को नहीं। इसी प्रकार परमेश्वर भी सब के उपकार करने की प्रार्थना में सहायक होता है, हानिकारक कर्म में नहीं। जो कोई 'गुड़ मीठा है' ऐसा कहता (ही) है, उसको गुड़ प्राप्त व उसको स्वाद प्राप्त कभी नहीं होता। और जो यत्न करता है, उसको शीघ्र वा विलम्ब से गुड़ मिल ही जाता है। 'महर्षि अन्यत्र लिखते हैं- 'सब मनुष्यों को अपने मित्र और सब प्राणियों के सुख के लिए परमेश्वर की प्रार्थना करना और वैसा ही अपना आचरण करना चाहिए।... जैसी परमेश्वर की प्रार्थना करें वैसा ही उनको पुरुषार्थ भी करना चाहिए। (यजु. 3-26) वास्तव में प्रार्थना तो अपने भीतर एक आत्मविश्वास और उत्साह प्राप्त करने के लिए की जाती है और इसके लिए पूर्ण श्रद्धा व समर्पण की जरूरत होती है। समर्पण के लिए व्यक्ति को अहंकार रहित होना भी अनिवार्य है। असल में हर कोई छोटा व्यक्ति किसी बड़े की सहायता चाहता ही है और यह एक स्वाभाविक कामना है। हम किसी न किसी समर्थ एवं शक्तिशाली की सहायता में ही अपने आप को सुरक्षित अनुभव कर पाते हैं, और सही ढंग से की गई प्रार्थना से व्यक्ति को यह उपलब्धि प्राप्त होती है। इस प्रकार कर्मशीलता की भावना से भरी, अहंकार रहित, श्रद्धा, समर्पण और हृदय से निकली हुई प्रार्थना निश्चितरूप से सफलीभूत होती है। ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका में महर्षि लिखते हैं- 'इस प्रकार से जो मनुष्य अपनी सब चीजें परमेश्वर के अर्थ समर्पित कर देता है, उसके लिए परमकारुणिक परमात्मा सब सुख देता है, इसमें सन्देह नहीं।'

महर्षि दयानन्द धाम, महादेव
सुन्दरनगर, जिला मण्डी (हि.प्र.)

महर्षि कपिल

महर्षि कपिल के पिता कर्दम ऋषि थे। आपकी माता का नाम मनुपुत्री देवहूति था। महर्षि कपिल का जन्म आज से लगभग 5000 वर्ष पूर्व माना जाता है। आप महान् तेजस्वी ऋषि थे। बौद्ध सम्प्रदायियों के अनुसार महर्षि कपिल गौतम ऋषि के वंशज थे। आपके मुख्य शिष्य का नाम आसुरी था। इसका प्रमाणस्वरूप श्लोक है-

पञ्चमः कपिलो नामसिद्धेशः काल विलुप्तम्।
प्रोवाचासुरये सांख्यं तत्त्वग्रामविनिर्णयम्।।

इसका अर्थ है- काल में विलुप्त हो गए सांख्यशास्त्र का उपदेश महर्षि कपिल ने ही सांख्य के सुप्रसिद्ध आचार्य आसुरि को दिया था। आचार्य आसुरि के शिष्य पंचशिख हुए। पंचशिख के पास ऋषि जैगीश्रव्य ने शिष्यत्व ग्रहण किया था। आचार्यों ने सांख्यदर्शन का प्रचार-प्रसार किया। महर्षि कपिल के मूल ग्रन्थ का नाम 'षष्टितन्त्र' था। आपके शिष्य पंचशिख तथा वार्षगण्य ने इस ग्रन्थ पर भाष्य लिखे और उसकी व्याख्या की।

सांख्यदर्शन में 527 सूत्र उपलब्ध हैं। सांख्यदर्शन के माध्यम से महर्षि कपिल ने प्रथम बार आत्मा, अनात्मा तथा भौतिकवाद के सूक्ष्म तत्वों का विस्तृत एवं गंभीर विवेचन प्रस्तुत किया। आपके मत में मूलभूत दो प्रकार के अनादि तत्व हैं। प्रकृति एवं पुरुष। पुरुष से आत्मा एवं परमात्मा दोनों का ग्रहण होने से मूलभूत अनादि तत्व तीन प्रकार के हुए। प्रकृति भी सत्त्व, रज एवं तम इन तीन गुणों के समुदाय का नाम है। प्रकृति से महत्तत्व, उससे अहंकार, अहंकार से 16 पदार्थ - 5 तन्मात्राएँ तथा 11 इन्द्रियाँ उत्पन्न होती हैं। आगे पाँच तन्मात्राओं से पाँच स्थूलभूत उत्पन्न होते हैं। प्रकृति अनुत्पन्ना है। महत्तत्व से स्थूलभूतों की रचना को विकृति कहते हैं। पुरुष प्रकृति-विकृति से परे अर्थात् पृथक् चेतन सत्ता है। जब पुरुष (जीवात्मा) को अपने स्वरूप का तथा पुरुष (परमात्मा)

का ज्ञान होता है तब वह समस्त दुःखों एवं बन्धनों से मुक्त होकर मुक्ति सुख को भोगता है।

बौद्ध दर्शन असत् से सत् की उत्पत्ति मानता है। परन्तु सांख्य ने घोषित किया कि सत् से ही सत् की उत्पत्ति होती है। सत् कभी भी असत् नहीं हो सकता। आधुनिक विज्ञान का भी यही सूत्र है कि शून्य से शून्य ही उत्पन्न होगा। सत्तात्मक पदार्थ का कभी नाश नहीं होता।

महर्षि कपिल दार्शनिक होने के साथ-साथ वैज्ञानिक भी थे। आपने ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति तथा निष्क्रिय ऊर्जाशक्ति की उपस्थिति को स्पष्ट किया। आपके द्वारा प्रतिपादित सिद्धान्तों को आधुनिक वैज्ञानिकों ने भी मान्यता दी है।

माँ का संदेश

जापान के एक भयंकर भूकंप की सच्ची घटना है। भूकंप के बाद, बचाव दल के सदस्य एक खंडहर में पहुँचे तो देखा कि एक स्त्री का शरीर पड़ा है। उसका शरीर ऐसे झुका हुआ था मानों प्रार्थना की मुद्रा में हो। उसने शरीर आगे की ओर झुकाकर दोनों हाथ किसी वस्तु पर टिका रखे थे। उसकी कमर व सिर बुरी तरह घायल थे। काफी मुश्किल से बचाव दल का लीडर खंडहर में एक तंग जगह से घुसकर उस स्त्री तक पहुँच गया। उसे आशा थी कि वह शायद जीवित हो। लेकिन उसका शरीर बिल्कुल ठंडा और अकड़ा था। टीम के सदस्य दूसरी ओर निकल गए। लेकिन लीडर के मन की आवाज़ ने उसे वापस उसी मृत स्त्री के पास लौटा दिया। वह घुटनों के बल बैठ कर मृत स्त्री के नीचे खाली जगह से कुछ ढूँढने लगा। अचानक, वह चिल्ला उठा, 'एक बच्चा... यहाँ एक बच्चा है।' पूरी टीम वापस आई। उसके सदस्य महिला के आसपास के मलबे को हटाने लगे। एक तीन माह का बालक, एक सुंदर कंबल में लिपटा, स्त्री के मृत शरीर के नीचे पड़ा था। जब टीम लीडर ने उस बच्चे को उठाया तो वह शांत सो रहा था। डॉक्टरों ने फौरन बच्चे की जाँच की। कंबल उतारा तो देखा उसके अंदर एक सेलफोन था। फोन के स्क्रीन पर एक संदेश था 'अगर तुम बच गए तो याद रखना तुम्हारी माँ तुम्हें बहुत प्यार करती है।' सारे उपस्थित लोग उस संदेश को बारी-बारी पढ़ रहे थे। जिसने भी पढ़ा, उसकी आँखें छलछला उठीं।

जब अन्तःकरण शुद्ध हुआ

-महात्मा आनन्द स्वामी

मथुरा में बाल ब्रह्मचारी तेज से भरपूर स्वामी दयानन्द पाखण्ड के दुर्गों को गिराये जाते थे। प्रतिदिन शास्त्रार्थ होते थे। प्रतिदिन उनके विरोधी हारते थे। दाँत पीसते थे कि यह साधु कल मथुरा सें पढ़कर गया था, आज हमारी ही पोल खोल रहा है। हमारी जीविका छीन रहा है। शास्त्रार्थ में हमसे हारता नहीं। इसे हराने के लिए कोई और उपाय करना चाहिए। उपाय सोचा गया। एक वेश्या के पास गए वे लोग। सुन्दर थी वह। उससे बोले- 'हम तुझे बहुत-से आभूषण देंगे। अमुक उद्यान में दयानन्द रहता है तू उसके पास जा। उसके पास जाकर कोलाहल मचा देना कि इसने मुझे छेड़ा है। हम निकट ही छिपे रहेंगे। बाहर निकल डण्डे से उसे अधमरा कर देंगे। बाहर निकल जाने पर तुम्हें और भी रुपया देंगे।'

वेश्या ने वह बात मान ली। अपने-आपको खूब सजाकर, कितने ही आभूषण धारण करके वह वहाँ गई, जहाँ ब्रह्मचर्य और आत्मा के तेज से चमकते हुए स्वामी दयानन्द बैठे थे- एक वृक्ष के नीचे आँखें मूँदकर, ध्यान में मग्न। वेश्या ने उनको दूर से देखा तो ऐसा प्रतीत हुआ जैसे आधे पाप धुल गए हैं। निकट गई तो शेष आधे भी धुल गए, और निकट जाने पर अन्तःकरण भी पवित्र हो गया। एक चीख उसके मुख से निकल गई। बाल ब्रह्मचारी ने आँखें खोल दीं; बोले, 'माँ! तुम कौन हो?'

माँ शब्द सुनते ही उसका हृदय भर आया। आँखें डबडबा आईं। अश्रुभरी आँखों से उसकी ओर देखकर अपने आभूषण उतारने लगी। महर्षि ने फिर कहा - 'माँ! तुम कौन हो? अपने बेटे से क्या लेने आई हो तुम?'

स्त्री ने सिसकते हुए कहा - क्षमा माँगने आई हूँ महात्मा! इन आभूषणों ने मुझे अंधा कर दिया था। इनकी मुझे आवश्यकता नहीं।' और रोते हुए उसने सारी कहानी महर्षि को सुना दी। महर्षि ने गम्भीरता से कहा-'माँ, ईश्वर ने जो श्रेष्ठ बुद्धि इस समय दी है, वह सदा बनी रहे, यही मेरा आशीर्वाद है।'

इस स्त्री के पाप भरे मन को बदला तो किस वस्तु ने? महर्षि की पवित्र आत्मा की शक्ति ने। आत्मा की शक्ति जिनके अन्दर जाग उठती है, उसके समक्ष एटम बमों और हाइड्रोजन बमों की शक्ति भी हार जाती है।

शहीद खुदीराम बोस ने
गीता लेकर चूमा फन्दा
(30 अप्रैल 1908)

-शिव कुमार गोयल

खुदीराम बोस ने जीवन के केवल 17 वसन्त देखे थे। 17 वर्ष की अल्पायु में ही उसने स्वातन्त्र्य लक्ष्मी का अभिषेक अपने रक्त से किया था। माँ भारती की स्वाधीनता के लिए प्राणोत्सर्ग करने वाला वह दीवाना था 'खुदीराम बोस'। वह कलकत्ता के एक स्कूल का छात्र था। अंग्रेज अधिकारियों द्वारा भारतीयों पर किए जा रहे अत्याचारों को देखकर उसका बाल हृदय विद्रोह कर उठा। पुस्तकों का रास्ता छोड़कर उस तरुण ने तलवार की धार का रास्ता अपना लिया। कलकत्ता हाईकोर्ट के जज मि. किंग्सफोर्ड ने भारतीय नवयुवकों को कालापानी व फाँसी का दण्ड देकर स्वाधीनता की चिंगारी को दबाने का प्रयास किया। उसने युवकों को कड़े से कड़े दण्ड दिए, उन्हें फाँसी के रस्सों में लटकवाया। किंग्सफोर्ड के इन अमानुषिक अत्याचारों ने ही तरुण खुदीराम का बाल हृदय झकझोर दिया। उसने पुस्तक फेंककर पिस्तौल थाम ली अपने-नन्हे-नन्हें हाथों में।

मि. किंग्सफोर्ड की बदली कलकत्ता से मुजफ्फरपुर हुई तो तरुण खुदीराम बोस भी अपने साथी प्रफुल्लकुमार चाकी के साथ मुजफ्फरपुर जा पहुँचा। हृदय में केवल एक ही लगन थी, एक ही तड़प-भारतीयों पर निर्मम अत्याचार करने वाले किंग्सफोर्ड को मजा चखाना, उससे प्रतिकार लेना। मुजफ्फरपुर के क्लब में एकत्रित अंग्रेज अधिकारी खाने-पीने एवं तफरी करने में मस्त थे। रात्रि के 8 बजे क्लब के बाहर एक जोरदार भयंकर धमाका हुआ। क्लब में उपस्थित सभी अंग्रेज अधिकारियों के हृदय दहल उठे। क्षण-भर में ही समस्त नगर

में समाचार फैल गया कि स्थानीय अंग्रेज वकील पी. केनेडी की गाड़ी को बम से उड़ा दिया गया। समस्त नगर में आतंक छा गया। पुलिस ही पुलिस दिखाई देने लगी।

खुदीराम बोस एवं उसके वीर साथी प्रफुल्ल कुमार चाकी ने यह बम किंग्सफोर्ड की कार समझकर फेंका था। दोनों की गाड़ी का रंग एक-जैसा होने से भूल से केनेडी की गाड़ी पर फेंक दिया गया। सौभाग्यवश किंग्सफोर्ड तो बच गया। किन्तु केनेडी को दुर्भाग्य ने आ घेरा। उसकी पत्नी एवं पुत्री मारी गई।

बम फेंकते ही दोनों वीर तरुण पुलिस की आँखों में धूल झोंककर भाग निकले। खुदीराम भागते-भागते रातों-रात 25 मील चलकर बेनी ग्राम में जा पहुँचा। वह भूखा-प्यासा था। 25 मील तक भागने के कारण बुरी तरह से थक गया था। स्टेशन के पास एक मोदी की दुकान पर खड़ा वह चने खरीद रहा था कि उस समय स्टेशन मास्टर ने एक बाबू से कहा- "मुजफ्फपुर में अंग्रेज वकील की मेम व लड़की को बम से उड़ा दिया गया। हत्यारों को गिरफ्तार करने के लिए वारण्ट आए हैं। इस गाड़ी की तलाशी लेनी है।" वीर खुदीराम ने सुना तो सहसा उसके मुख से निकल पड़ा। "हैं! क्या किंग्सफोर्ड बच गया?" पास में खड़े एक पुलिस कांस्टेबल ने युवक के मुख से ये शब्द सुने तो उसे सन्देह हो गया। खुदीराम तुरन्त भाग निकला। पुलिस के सिपाहियों ने उसका पीछा किया। बुरी तरह से भूखा-प्यासा व थका होने के कारण वह तीन मील तक भागने के बाद गिरफ्तार कर लिया गया। उसके पास से माउजर रिवाल्वर एवं 30 कारतूस बरामद हुए। जिस समय खुदीराम को रेल द्वारा मुजफ्फरपुर लाया गया, उस समय जनता की भारी भीड़ उस वीर तरुण का स्वागत करने के लिए स्टेशन पर उमड़ पड़ी।

उधर प्रफुल्ल चाकी भागकर समस्तीपुर जा पहुँचा। समस्तीपुर से वह कलकत्ता जाने वाली ट्रेन में सवार हुआ। उसी डिब्बे में नन्दलाल बनर्जी नामक पुलिस सब-इंस्पेक्टर भी यात्रा कर रहा था। उसने मुजफ्फरपुर के हत्याकांड का समाचार सुन लिया था। चाकी को देखते ही उसे सन्देह हो गया। 'चाकी' ने नन्दलाल को अपनी ओर घूरते देखा तो वह भी ताड़ गया। उसने अगले स्टेशन पर गाड़ी के रुकते ही डिब्बा बदल लिया। उधर नन्दलाल ने स्टेशन से तार द्वारा पुलिस को सूचना दे दी। मोकामा स्टेशन पर पुलिस ने गाड़ी को घेर लिया। प्रफुल्ल चाकी ने वीरतापूर्वक पुलिस पर गोलियाँ दागीं। उसने देशद्रोही नन्दलाल पर भी गोली का वार किया। किन्तु निशाना चूक गया। जब वीर चाकी ने बचने का कोई उपाय न देखा तो उसने स्वयं को गोली मारकर अपने प्राणों को स्वाधीनता के लिए बलिदान कर दिया। खुदीराम ने मुजफ्फरपुर के जिला मजिस्ट्रेट के सामने निर्भीकतापूर्वक स्वीकार किया-"क्रान्तिकारियों पर किए जा रहे अमानवीय अत्याचारों का प्रतिकार लेने के लिए मैंने ही बम फेंककर हत्या की थी।"

'मुजफ्फरपुर लोमहर्षक हत्याकांड' के नाम से यह घटना समस्त विश्व में फैल गई। खुदीराम पर न्यायालय में मुकद्दमा चलाया गयां तो पैरवी के लिए किसी भी वकील का सामने आने का साहस न हुआ। वकील भी अंग्रेज नौकरशाही से आतंकित थे। अन्त में एक बंगाली वकील बाबू कालिदास बोस ने साहस करके अपना नाम पैरवी के लिए प्रस्तुत किया। वीर खुदीराम ने न्यायालय में भी निर्भीकतापूर्वक स्वीकार किया-"मैंने ही बम फेंककर हत्या की थी।" कई दिनों तक मुकद्दमे का यह नाटक चलता रहा। अन्त में पूर्व-निश्चित निर्णय के अनुसार मजिस्ट्रेट ने 'मृत्युदण्ड' का

फैसला सुना दिया।

11 अगस्त का दिन फाँसी के लिए निश्चित किया गया। फाँसी की कालकोठरी में 18 वर्षीय तरुण खुदीराम मातृभूमि की वेदी पर अपने प्राणों की आहुति चढ़ाने के दिन की उत्सुकता से प्रतीक्षा करने लगा। प्रतिदिन दुर्गासप्तशती एवं गीता के पाठ एवं माँ काली की उपासना में तल्लीन रहने लगा। 11 अगस्त को फाँसी से पूर्व गीता के पाठ एवं भगवद्भजन में तल्लीन युवक अपने शरीर की सुधबुध खो बैठा। प्रातः गीता हाथ में लेकर खुदीराम बड़ी मस्ती से झूमता हुआ फाँसीघर की ओर बढ़ा और देखते ही देखते माँ का वह पागल पुजारी उछलकर तख्ते पर चढ़ गया। फाँसी का फन्दा अपने सुकोमल हाथों से गले में डाला और "स्वातन्त्र्य लक्ष्मी की जय" का उद्घोष कर उसने स्वाधीनता की वेदी पर अपने प्राणों को होम कर डाला। श्मशान-भूमि पर हजारों नर-नारियों ने एकत्रित होकर इस वीर हुतात्मा को हार्दिक श्रद्धांजलि अर्पित की।

पिलखुवा, गाजियाबाद

काम से ज्यादा काम के पीछे की भावना का महत्व होता है। जो काम शुद्ध हृदय से होता है, वह छोटा भले ही हो परंतु उसका फल बड़ा महत्वपूर्ण होता है। बहुत बड़ा काम अगर हीन आदर्श लेकर किया जाए तो उसकी कोई बड़ी कीमत नहीं हो सकती।

-राजेंद्र प्रसाद

जीवन में मनुष्य का जहाँ भावों से संबंध रहता है वहाँ तर्क और न्याय से काम नहीं चलता।

-प्रेमचंद्र

कोई भी चीज मूलतः न तो भली होती है और न ही बुरी। हमारा भाव उसे वैसा बना देता है।

-विवेकानन्द

जलियाँवाला बाग का रोमांचक दृश्य
(1919 की खूनी बैसाखी पर)

-स्व. ज्ञानी पिण्डीदास

अमृतसर में हरिमन्दिर साहब से थोड़ी दूर उत्तर दिशा में चारों ओर से गगनचुम्बी अट्टालिकाओं से वेष्ठित एक विशाल मैदान-सा था। बहुत पुराने दिनों में कोई बाग होता होगा। हमारे सामने तो एक बड़ा कूप और एक मन्दिर के खण्डहर मौजूद हैं। वस्तुतः उसका एक भाग मलमूत्र त्याग और कूड़ा-कर्कट फेंकने का ही स्थान था। रॉलेट एक्ट विरोधी भारी सभाओं के लिए शहर के अन्दर कोई खुला मैदान न था। अमृतसर के हिन्दुत्वनिष्ठ नेता श्री महाशय रत्नचन्द के प्रयत्न से यह गन्दा स्थान स्वच्छ बन गया और बड़ी पब्लिक मीटिंगों के लिए स्थान का प्रश्न हल हो गया।

अमृतसर-पंजाब-भर में सबसे बड़ा धार्मिक, सामाजिक, शैक्षणिक व्यापारिक एवं व्यावसायिक केन्द्र है। सभी त्यौहार श्रद्धापूर्वक यहाँ मनाए जाते हैं। सन् 1919 की राम नवमी 9 अप्रैल को थी। प्रथानुसार श्रीराम, लक्ष्मण व सीता की सुन्दर झाँकियों की भव्य शोभायात्रा निकाली गई। इस वर्ष हिन्दुओं के साथ मुसलमान भी सम्मिलित हुए। डॉ. सत्यपाल तथा किचलू इस समारोह का नेतृत्व कर रहे थे। यह ऐक्य अंग्रेजों को जँचा नहीं। उसी रात दोनों को पकड़ कर किसी अज्ञात स्थान पर पहुँचा दिया गया। 10 अप्रैल को सूर्योदय से पूर्व ही गिरफ्तारी का समाचार फैल गया। हार्दिक उद्विग्नता के कारण तेली-तम्बोली, धोबी-नाई, पनवाड़ी-हलवाई तक ने कोई दुकान न खोली-अपने आप मुकम्मल हड़ताल हो गई। हजारों लोग इकट्ठे होकर सिविल लाइन की तरफ चल दिए। हाल गेट से निकल कर सिविल लाइन में जाने से पूर्व मोटर-ताँगा वाला और दूसरा सीढ़ियों वाला रेलवे पुल पार करना पड़ता है। दोनों पर फौजी टुकड़ियाँ तैनात थीं। उनकी गोलीबारी से 8-10 हिन्दू-मुसलमान मारे गए। भीड़ बे-काबू हो नगर में घुसी। हाल गेट पर लगी बड़ी घड़ी, इण्डस्ट्रियल स्कूल की बिल्डिंग (सरकारी) और चर्च मिशन प्रीचिंग हाल क्षतिग्रस्त हुए। विदेशी संस्था नेशनल बैंक ऑफ इण्डिया पर भरपूर आक्रमण हुआ। क्षणों में ही यह सुन्दर, सुदृढ़, सुविशाल भवन जनता की प्रतिकार भावनाओं की ज्वाला में धाँय-धाँय जलने लगा। लाखों का माल लूटा। दो अंग्रेज अफसर जान गँवा बैठे। आगे चार्टर्ड की बारी आई।

अंग्रेज अफसर कहीं छिप कर बच पाए। सम्पत्ति को भारी क्षति हुई। टाउनहाल तथा तत्सम्बन्धी डाकघर जला दिए गए। एलायन्स बैंक ऑफ शिमला के दो अंग्रेज अफसर मार दिए गए और बैंक का रिकार्ड तथा फर्नीफर बाजार में फेंककर अग्नि की भेंटकर दिया गया।

सीढ़ियों वाले पैदल रेलवे पुल पर अवरुद्ध भीड़ ने रेलवे मालागोदाम का रुख किया। रक्तवर्ण अग्नि की लपलपाती जिह्वाएँ आकाश को स्पर्श करने लगीं और लाखों का माल मिनटों में राख का ढेर हो गया। सवारी गाड़ी के अंग्रेज गार्ड मिस्टर राबिन्सन को मृत्यु घेरकर उधर ले आई और वह जनता की प्रतिकाराग्नि में जल-भुनकर कोयला हो गया। दोनों पुलों पर शहीद किए गए मुसलमानों को जामा मस्जिद हाल बाजार में मियाँ समदू के कब्रिस्तान में दफना दिया गया और हिन्दू बलिदानियों को दुर्याणा स्थित शिवपुरी नामी श्मशान घाट में अग्नि के सुपर्द किया गया। ऊपर वर्णन की गई सब घटनाएँ 10 अप्रैल 1991 को घटित हुईं। जनता ने व्यवस्था सम्भाल ली। यह एक प्रकार की चाल थी। सरकार ने पुलिस प्रबन्ध शिथिल करके नगर को अपने हाल पर छोड़ दिया। तीन दिन (10-11-12 अप्रैल) स्वयंसेवकों के समूह सुरक्षा का प्रबन्ध करते रहे। काम-धन्धा सब बन्द रहा। स्थान-स्थान पर मुफ्त लंगर और प्याऊ लोगों की अन्न जल से सेवा करते रहे। प्रसन्नता का विषय यह है कि इन दिनों चोरी-चकारी आदि की एक भी घटना नहीं हुई।

रोलैट ऐक्ट ऐजीटेशन के नेता थे- 1. डॉ. सत्यपाल 2. डॉ. किचलू 3. डॉ. मुहम्मद बशीर 4. महाशय रत्नचन्द 5. चौ. बुग्गामल 6. स. गुरदयालसिंह सलारिया 7. ला. गिरधारीलाल 8. स्वामी अनुभवानन्द

13 अप्रैल, 1919 को बैसाखी का पावन पर्व था। पंजाब भर से जनता भारी संख्या में हरिमन्दिर (दरबार साहब) के दर्शन और (रामदास सरोवर नहाते, सब उतरे पाप-पुण्य कमाते) पर श्रद्धा के कारण अमृत सरोवर में स्नान के विचार से भीड़ उमड़ी चली आती है। म्युनिसिपल कमेटी द्वारा प्रतिवर्ष इन्हीं दिनों आयोजित भारी माल मवेशी मण्डी भी जनता के आकर्षण का एक प्रधान कारण है। इसमें लाखों रुपयों का बैल, गौ-भैंस-घोड़े-खच्चर आदि का क्रय-विक्रय हो जाता है।

उस दिन दोपहर के समय हंसराज (सुनार) नामी एक कांग्रेसी

ने, जो नेताओं के बहुत मुँह चढ़ा था (यद्यपि वह बाद में सरकारी गवाह बन गया था), मुनादी कर दी कि आज सायं 4 बजे जलियाँवाला बाग में बा. कन्हैयालाल एडवोकेट की अध्यक्षता में भारी पब्लिक जलसे में बड़े-बड़े नेता भाग लेंगे। अतः सब उस मीटिंग में भाग लें।

दोपहर बाद इन्स्पैक्टर पुलिस अब्दुल्ला जीप पर सवार घोषणा कर रहा था- "नगर में मार्शल लॉ लगा दिया गया है। पाँच या पाँच से अधिक भीड़ इकट्ठी होना निषिद्ध कर दिया गया है। इस आदेश की अवहेलना पर गोली चला दी जाएगी।"। मेरे स्थान कटड़ा दूलो पर मित्र मण्डली गपशप में मग्न थी। हमने हंसराज का ढिंढोरा भी सुना और अब्दुल्ला की मुनादी भी। हम किंकर्तव्यविमूढ़ किसी निर्णय पर नहीं पहुँच पा रहे थे कि मीटिंग में जाएँ या न जाएँ। कुछ सज्जन बहुत उतावले थे, जिन्हें आचार्य देव प्रकाश जी रोक रहे थे। मैंने मध्यम मार्ग सुझाया कि बाग तक तो चलो। बाहर से ही भीड़ देखकर लौट आएँगे, मीटिंग में नहीं जाएँगे। इसे सबने स्वीकार कर लिया और हम दस-बारह व्यक्ति चल दिए। वहाँ भीड़ का कोई ठिकाना न था। इसे देखकर लौटने ही लगे थे कि हमारे एक साथी चौ. हंसराज दत्त भीड़ के अन्दर नजर आए। उन्हें अपने साथ वापस लौटा लाने के विचार से मैं बाग में घुसा और शेष साथी भी अन्दर जाकर डॉ. गुरबख्शराय का भाषण सुनने लगे। प्रधान की कुर्सी पर श्री कन्हैयालाल की फोटो पड़ी थी। चौ. हंसराज मेरी प्रार्थना पर मीटिंग में से निकल कर हमारे साथ लौट ही रहे थे कि जनरल डायर पचास गोरे जवानों की एक टुकड़ी के साथ बाग के पश्चिमी गेट से अन्दर घुसा। सिपाहियों को पंक्तिबद्ध होने के साथ ही गोली वर्षा का आदेश दे दिया। आन-की-आन में शवों के पुश्ते लगने लगे और घायलों की चीखों से कान फटने लगे। ला. ढोलनदास के मकान के आगे बढ़े हुए नुक्कड़ पर जब मैं पहुँचा तो उस समय मेरा दायाँ पग बाग के अन्दर और बायाँ बाहर था। दूसरे क्षण जब मेरा दायाँ पग बाग से बाहर निकला, तो मेरे दायें पग पर जो अभागा व्यक्ति आया, वह गोली का शिकार हो गया। सब लोग भागे जा रहे थे। किसी को किसी दूसरे का न पता था न होश। डायर के इस दानवी कृत्य से बारह-चौदह सौ व्यक्ति शहीद और अढ़ाई तीन हजार

घायल हुए थे। सैकड़ों बिचारे आयुभर के लिए अपंग हो गए थे। सबके मन-मस्तिष्कों पर अभूतपूर्व आतंक छा गया था। मेरे साथियों में से कुछ एक की मनःस्थिति का अध्ययन कीजिए-

1. पं. रामानारायण शर्मा मेरे साथ सड़क पार कर प्रागदास के अखाड़े वालों के एक बाग में कूदे, जो सड़क से 5-6 फुट गहरा था। मेरा घुटना नीचे पड़े एक पत्थर पर लग कर जख्मी हो गया, जिसका निशान आज भी मौजूद है। पं. रामनारायण का बायाँ पाँव एक कच्ची नाली के कीचड़ में धँस गया। पैर निकाला तो बूट कीचड़ में रह गया। दाएँ हाथ में बूट निकाला तो कुहनी तक बाजू कीचड़ से लथपथ हो गई। घुटने तक बायाँ पाँव और कुहनी तक दायाँ हाथ गन्दे कीचड़ से लथपथ, उसी हाथ में कीचड़ में लिथड़ा बूट पकड़े आप दौड़े जा रहे थे, पगड़ी खुलकर गले का हार बनी हुई थी। आधा मील दौड़ते-दौड़ते जब घर से 100 गज पर पहुँचे तो वे घर का रास्ता पूछने लगे। याद रहे उनका जन्म उसी मुहल्ले का था। 22-24 वर्ष खेल-कूद कर गुजार चुके थे। प्रभु की दया से मेरा होश ठीक था और मैं उन्हें घर पर पहुँचा कर अपने मकान पर गया।

2. मेरी छोटी बहिन मेरे मकान कटड़ा दूलो से पौन मील पर कटड़ा गर्भासिंह में रहती थी। गोलीबारी की आवाज़ सुनकर किसी अनिष्ट की चिन्ता से वह बेसुध-सी होकर मेरे मकान की ओर भागी। घर के नीचे आकर चिल्लाने लगी, 'भाई साहब कहाँ हैं?' मैं तब तक घर पहुँच चुका था। उसकी चिल्लाहट सुनकर मैं नीचे आया। उसे गले से लगा कर सान्त्वना दी कि मैं ठीक हूँ। परन्तु मानती ही न थी। निरन्तर चिल्ला रही थी - "मुझे बताओ भाई साहब कहाँ हैं?" अन्ततः हमारी माता जी को नीचे आकर उसे धीरज बँधाना पड़ा, तब कहीं जाकर शान्त हुई।

3. हमारे साथी भक्त दुर्गादास जी बाग से निकल कर घर की तरफ दौड़े जा रहे थे कि उनकी जूती पैरों से निकल गई। भीड़ में धोती भी खुलकर गिर पड़ी। सिर से पगड़ी भी कहीं जा गिरी, परन्तु वह विक्षिप्त-सी अवस्था में एक पर्दादार मुस्लिम कश्मीरियों के घर में जा घुसे। वहाँ एक चारपाई पर एक युवती लेटी हुई थी, वहीं पर आप भी जा लेटे। वह

देवी उठकर अन्दर चली गई। हिन्दू-मुस्लिम एकता उन दिनों जोरों पर थी, अन्यथा भगवान जाने क्या अनर्थ हो जाता। 10-15 मिनट में भक्त जी को होश आया, तो उठे और 'बहन जी! मैं अन्दर जाकर अपनी नग्नता ढाँप लूँ की आज्ञा लेकर अन्दर जाकर अपनी कमीज बाँधी और घर जा सके।

गोली वर्षा के बाद कर्फ्यू लगने वाला था। उस थोड़े से शेष क्षणों में कोई उद्यमी व्यक्ति घायलों में अपने किसी सम्बन्धी को ढूँढ कर घर पर ले गया, उनमें से तो शायद कोई बच भी गया हो, अन्यथा अगणित जख्मी बदनसीब तो पानी की बूँद के लिए तरसते-तरसते मर गये थे। कुत्ते-बिल्ली आदि हिंसक पशुओं ने भी कई लाशों को नोंचा-घसीटा और शीघ्र यमद्वार पहुँचाया होगा।

मैंने अपनी इन आँखों से देखा, आतंकित भाई-बहिनों की दुर्दशा का हल्का-सा चित्र खींचा है। वास्तव में नगर-भर में लोग बहुत भयभीत हो गये थे। दो-तीन दिन बाद तो मार्शल लॉ अधिकारियों का बीभत्स चित्र और भी स्पष्टता से सामने आ गया। पकड़-धकड़, खाना-तलाशियाँ आरम्भ हुईं। परस्पर बैर-विरोध निकालने वालों की बन आई। बैंक की लूट का माल ढूँढने के बहाने किसी भी नागरिक की जान-माल आबरू सुरक्षित न रही। कई लोगों के पास आपत्तिजनक साहित्य भी था, उन्हें भी पुलिस का भय सताने लगा। मैंने स्वयं भी कई बहुमूल्य पुस्तकों का एक-एक पन्ना फाड़ा, घर की पिछली कोठरी में किसी पतीले या कड़ाही में उसे फूँका और राख में पानी डालकर नाली में बहा दिया।

तदनन्तर हिन्दू-मुस्लिम नेताओं की गिरफ्तारियाँ आरम्भ हुईं। डॉ. सत्यपाल और डॉ. किचलू तो पहले ही धर्मशाला जेल में बन्द थे, अब महाशय रत्नचन्द और चौ. बुग्गामल (जो बाद में कांग्रेस की मुस्लिम तुष्टिकरण नीति से तंग आकर हमारे साथ ही हिन्दू महासभा में सम्मिलित हो गये (और मृत्यु पर्यन्त पंजाब हिन्दू सभा के उपाध्यक्ष रहे), स्वामी अनुभवानन्द सरस्वती, पं. कोटूमल, पं. दीनानाथ, डॉ. गुरबख्शराय और बा. नारायणदास खन्ना भी पकड़ लिए गए। संक्षेपतः यह कि मार्शल लॉ के विविध अपराधों में आठ मुसलमान और नौ हिन्दू नेतागण धर लिए गये उन्हें फाँसियों, अजन्म कालापानी और सम्पत्ति जप्ती के कठोर दण्ड दिए गए।

हिन्दुत्व और स्वातन्त्र्य समर के उद्‌गाता लाला लाजपतराय

–डॉ. भवानीलाल भारतीय

आर्यसमाज के जिन महापुरुषों ने स्वेदश हित के लिए सर्वोत्कृष्ट बलिदान किये, उनमें लाला लाजपतराय का नाम चिरस्मरणीय है। ये पहले बलिदानी थे जिन्होंने स्पष्ट रूप से स्वीकार किया था कि राष्ट्रभक्ति का पाठ उन्होंने स्वामी दयानन्द से सीखा है, और आर्यसमाज रूपी माता की गोद में बैठकर ही वे स्वदेश हित के लिए कुछ कर पाये हैं। जन्म से वैश्य, किन्तु गुण-कर्म एवं स्वभाव से क्षत्रिय, लाजपतराय का जन्म पंजाब प्रान्त के जिला फरीदकोट के एक गाँव ढुँढिके में 28 जनवरी 1865 को हुआ। उनके पिता लाला राधाकृष्ण उर्दू फारसी के अच्छे जानकार तथा अध्यापक थे। 1880 में एण्ट्रेंस की परीक्षा पास कर लाजपतराय लाहौर आए। गवर्नमेंट कालेज से एफ.ए. तथा कानून की मुख्तारी परीक्षाएँ साथ-साथ उत्तीर्ण कीं। 1882 में लाहौर में ही वे आर्यसमाज के सम्पर्क में आये। लाला साईंदास की प्रेरणा से वे आर्यसमाज के सदस्य बने। पंडित गुरुदत्त तथा लाला हंसराज जैसे युवक यहाँ कालेज में लाला लाजपतराय के सहपाठी थे, वहाँ ये लोग आर्यसमाज में भी उनके सहयोगी कार्यकर्ता थे। जब 30 अक्टूबर 1883 को आर्यसमाज के संस्थापक ऋषि दयानन्द का अजमेर में निधन हुआ, तब आर्यसमाज लाहौर की ओर से 8 नवम्बर को शोक सभा का आयोजन किया गया। इसमें यह निश्चय हुआ कि दिवंगत महर्षि की स्मृति को चिरस्थायी बनाने के लिए 'दयानन्द एंग्लोवैदिक कालेज' के नाम से एक ऐसी शिक्षण संस्था की स्थापना की जाए, जिसमें संस्कृत एवं हिन्दी के उच्च स्तरीय शिक्षण वेदादि शास्त्रों की गम्भीर शिक्षा के साथ-साथ पश्चिमी ज्ञान-विज्ञान तथा अंग्रेजी भाषा के अध्ययन की व्यवस्था हो। डी.ए.वी. कालेज लाहौर की स्थापना तथा संचालन में लाला लाजपतराय का भी मूल्यवान सहयोग रहा।वे विभिन्न प्रतिनिधि मंडलों के सदस्य बनकर कालेज की स्थापना के लिए देश के विभिन्न नगरों में जाते रहे। जब यह महाविद्यालय सुचारू रूप से चल पड़ा, तब इसकी शिक्षा नीति को प्रभावी एवं गतिशील बनाने में लालाजी की महत्वपूर्ण भूमिका रही। कालान्तर में डी.ए.वी. कालेज में संस्कृत तथा

वेदादि शास्त्रों के पाठ्यक्रम के स्वरूप और उसकी रूपरेखा को लेकर आर्य नेताओं में अनेक प्रकार के मतभेद उभर आये, किन्तु लालाजी ने इस विवादास्पद विषय पर पर्याप्त सन्तुलित दृष्टिकोण अपनाया।

1920 में महात्मा गाँधी के नेतृत्व में असहयोग और सत्याग्रह के आन्दोलन चलाए गए और सरकारी स्कूलों और कालेजों के बहिष्कार की बात आयी। तब लाला लाजपतराय ने भी डी.ए.वी. कालेज संचालकों को, देश की आजादी के महत्तर उद्देश्य को समक्ष रखकर कुछ काल के लिए कालेज को बंद कर देने का सुझाव दिया। यह दूसरी बात है कि महात्मा हंसराज ने ऐसा कदम उठाने से इन्कार कर दिया। उनकी दृढ़ धारणा थी कि किसी तात्कालिक उद्देश्य की पूर्ति के लिए अधिक महत्वपूर्ण तथा स्थायी हित के कार्य की बलि नहीं दी जानी चाहिए। लाला लाजपतराय ने 1885 में वकालत की परीक्षा पास की। कुछ काल तक रोहतक तथा हिसार में वकील के रूप में कार्य में आशा से अधिक सफलता मिली। कानून के पेशे में भी उन्होंने अत्यधिक प्रतिष्ठा प्राप्त की। 1888 में वे कांग्रेस आन्दोलन से जुड़े। प्रथम बार इलाहाबाद अधिवेशन में सम्मिलित हुए। 1903 में वे पंडित गोपालकृष्ण गोखले के साथ कांग्रेस के शिष्ट मंडल के सदस्य के रूप में इंग्लैण्ड गए। वहाँ से वे अमेरिका चले गये और देश की स्वतंत्रता के लिए पश्चिमी देशों में अनुकूल वातावरण बनाया। लाला लाजपतराय ही प्रथम ऐसे महापुरुष थे, जिन्होंने राष्ट्रीय महासभा में पूर्ण स्वतंत्रता प्राप्त करने के विचारों का प्रसार किया और ब्रिटिश राज्य के अन्तर्गत रहकर देश को सीमित स्वतंत्रता प्राप्त करने के कांग्रेस के आदर्श का विरोध किया। उन्होंने लोकमान्य तिलक तथा बंगाली नेता विपिनचन्द्र पाल के सहयोग से, कांग्रेस में उग्रवादी गर्म विचारधारा का प्रवेश कराया। उन्होंने 1905 की बनारस कांग्रेस में ब्रिटिश युवराज के भारत आगमन के समय, उनका स्वागत करने का डटकर विरोध किया। सूरत कांग्रेस में लोकमान्य तिलक और लाला लाजपतराय ने कांग्रेस की नरम नीतियों का प्रबल विरोध किया था। इसका परिणाम कांग्रेस में पड़ी फूट के रूप में प्रत्यक्ष हुआ और पंडित मदनमोहन मालवीय, रासबिहारीबोस तथा फिरोजशाह मेहता आदि नरम विचार के नेताओं ने अनुभव कर लिया कि अब भारत की भावी राजनीति को स्वरूप देना,

लाला लाजपतराय और उनके साथियों के अधिकार में है। पंजाब किसान जागृति और उससे उत्पन्न क्रान्तिकारी राजनैतिक चेतना के सूत्रधार लालाजी ही थे। उनके और सरदार अजीतसिंह के जोशीले व्याख्यानों से भयभीत होकर तत्कालीन शासन ने उन्हें देश से निर्वासित कर बर्मा के माण्डले नगर में नजरबन्द कर दिया। किन्तु शासकों के इस अत्याचारपूर्ण कृत्य के प्रतिरोध में उठे प्रबल जनमत की अवहेलना करना सरकार के लिए सम्भव नहीं था। लालाजी तथा सरदार अजीतसिंह को शीघ्र ही रिहा करना पड़ा। स्वदेश लौटने पर एक लोकप्रिय जननायक के रूप में उनका स्वागत हुआ और जनता ने उन्हें सिर आँखों पर बैठा लिया। आर्यसमाज में रहकर ही लालाजी ने जनहित के कार्यों में भाग लेना सीखा था। 1899 में जब सम्पूर्ण उत्तर भारत अकाल की चपेट में आ गया, तब लालाजी अपने साथियों को लेकर अकाल राहत कार्यों में जुट गए। उन्होंने अनाथ बालकों को 'आर्य अनाथालय' फिरोजपुर में प्रवेश कराया, जबकि ईसाई मिशनरी उन्हें लेने के लिए तैयार बैठे थे। 1904 में कांगड़ा में भयंकर भूकम्प से जन धन की अपार क्षति हुई। उस समय भी वे भूकम्प पीड़ितों की सहायता के लिए उन दुर्गम पर्वतीय स्थलों पर पहुँचे। इस कार्य में डी.ए.वी. कालेज लाहौर के छात्र लालाजी के साथ थे। उड़ीसा, मध्यप्रदेश तथा उत्तरप्रदेश (संयुक्त प्रान्त) में जब 1907 में भयंकर दुष्काल पड़ा तब लाला लाजपतराय तुरन्त सहायता कार्यों में जुट गये। अब तक लालाजी देश के राजनैतिक क्षितिज पर एक प्रकाशमान नक्षत्र की भाँति उभर चुके थे। 1920 में विदेश यात्रा से लौटने पर, उन्होंने महात्मा गाँधी प्रवर्तित असहयोग आन्दोलन का समर्थन किया। इसी वर्ष वे कलकत्ता में आयोजित कांग्रेस के विशेष अधिवेशन के अध्यक्ष बनाए गए।

1924 में उन्होंने 'स्वराज्य पार्टी' का गठन किया और केन्द्रीय असेम्बली के सदस्य चुने गये। स्वामी श्रद्धानन्द और पं. मदनमोहन मालवीय की ही भाँति लालाजी का, कांग्रेस की अल्पसंख्यकों के प्रति तुष्टीकरण की नीति से घोर मतभेद था। इसलिए उन्होंने हिन्दू महासभा के कार्य में सहयोग दिया। उन दिनों हिन्दू महासभा सच्चे राष्ट्रवादी नेताओं की दृष्टि में संकीर्ण या साम्प्रदायिक संस्था नहीं समझी जाती थी। इसलिए उपर्युक्त नेताओं का इस संस्था से पूर्ण सहयोग रहता था।

1925 में हिन्दू महासभा के कलकत्ता अधिवेशन के वे सभापति बनाए गए। 1928 में भारत की राजनैतिक स्थिति का अध्ययन करने के लिए इंग्लैण्ड से सायमन कमीशन यहाँ भेजा गया। कांग्रेस ने इसके बहिष्कार का निर्णय लिया। सारे देश में सायमन कमीशन के विरोध में स्वर गूँजने लगे। कमीशन के सदस्य जिन-जिन नगरों में गये वहाँ-वहाँ उनके विरोध में कमीशन का बहिष्कार करने का निश्चय हुआ। 30 अक्टूबर 1928 को कमीशन लाहौर गया। नागरिकों ने कमीशन के सदस्यों को रेलवे स्टेशन पर ही काले झंडे दिखाने का निश्चय किया। पंजाब सरकार ने धारा 144 लगा दी तथापि, सैकड़ों लोग स्टेशन पर एकत्र हो गए। 'सायमन कमीशन वापस जाओ' के नारों से आकाश गूँज उठा। पुलिस को डंडे बरसाने का आदेश मिला। निहत्थे नागरिकों पर डंडा प्रहार होने लगा। अंग्रेज सार्जेंट सांडर्स ने लालाजी की छाती पर लाठी का प्रहार किया। भारत के इस बूढ़े शेर को मार्मिक आघात पहुँचा। उसी सायंकाल आयोजित जनसभा में नरकेसरी लाला लाजपतराय ने गर्जनापूर्ण स्वर में कहा, 'मेरे शरीर पर पड़ी विदेशी सरकार की एक-एक लाठी-अंग्रेजी राज्य के कफन की कील सिद्ध होगी।' इसी लाठी प्रहार से पीड़ित होकर लाला लाजपतराय का 17 नवम्बर 1928 को निधन हो गया। लालाजी का व्यक्तित्व बहुआयामी था। वे एक श्रेष्ठ वक्ता, प्रभावशाली लेखक, सार्वजनिक नेता, समर्पित समाजसेवक, शिक्षाशास्त्री, गम्भीर चिन्तक तथा विचारक थे। उन्होंने उर्दू तथा अंग्रेजी में अनेक उत्कृष्ट ग्रंथों की रचना की। भारत तथा विदेश के कतिपय महापुरुषों के उनके द्वारा लिखित जीवनचरित्र अत्यन्त लोकप्रिय हुए। सम्राट् अशोक, शिवाजी, स्वामी दयानन्द, पंडित गुरुदत्त विद्यार्थी तथा योगीराज श्रीकृष्ण के जीवनचरित्र तो उन्होंने लिखे ही, इटली के देशभक्त गैरीबाल्डी तथा मैजिनी के जीवन चरितों ने उन्हें अभूतपूर्व ख्याति दिलायी। देशवासियों में स्वातंत्र्य चेतना के प्रति जागृति इतनी महत्वपूर्ण मानी गई कि विदेशी शासन ने उन जीवनियों पर ही प्रतिबंध लगा दिया। भारतीय शिक्षा तथा अर्थशास्त्र जैसे विषयों पर भी उन्होंने प्रामाणिक ग्रन्थ लिखे। उनकी लिखी 'दि आर्यसमाज' नामक पुस्तक 1914 में इंग्लैण्ड में प्रकाशित हुई। लालाजी ने अपनी आत्मकथा भी लिखी।

Reminiscences of a soldier of the Indian National Army

-B. D. Ukhul

Shri Tek Ram was born in 1917 at village Karontha, District Rohtak, Haryana. After studying upto 7th class in his village, he passed Matric in 1938 from Jat School, Rohtak.His father's name was Chhelu Ram and mother's name Bhuri. He acquired working knowledge of English, Hindi, Urdu and studied Maths. Having passed Matric in 1938 at the age of 21 years British Army held recruitment camp at Rohtak and out of 50 candidate only 5 were selected and Shri Tek Ram was one of them who then underwent training at Jhansi Training School for one year to join Meerut Risala No. 18. He recalls his schedule starting with Race at 6.00 A.M..,playing Football, Hockey, Volley ball etc.and other routines for about 2 years at Meerut Cantt.

During the period 1941 he was part of Hundred Light Tank Sqadron at Singapore while fighting against Japan. In 1943-44 he was a prisoner of war under Japanese army. When Netaji appealed for joining Indian National Army, he joined the INA by signing the papers with his blood by cutting his vein. He also recalls Subhash Chandra Bose addressing the soldiers in Hindi on 2nd July, 1943. He remembers that on one occasion while Netaji was addressing the soldiers it started pouring heavily and Subhash was offered a cover over his head, but he denied it despite heavy downpour and all the soldiers also listened to him with apt attention all in the open. Netaji impressed on the soldiers that Britain was a small country was ruling a big country like India and we should be ashamed of it. He appealed the soldiers to stand solidly by him and offered to give a 3rd class ticket to all those who wished to go away..He remembers to have listened Subhash's broadcasts frequently, because Subhash's headquarter was at Rangoon. After fall of Singapore in February 1942 Shri Tek Ram was imprisoned by the Japanese army and remained in Changi prison upto 1946. Shri Tek Ram conveyed that one Col. Prabhu Dayal of the I.N.A leaked intelligence to the Britishers and deserted INA but when he returned to his village Kheri in district Jhajjar, he was discarded by the villagers and he had to leave his village because he had deserted his INA unit and Subhash Chandra termed such acts as DHOKHA or deceipt to motherland i.e. India.

After his release, Shri Tek Ram returned to his village in Haryana in 1946. He narrated about the struggle to get pension from our government and in 1972 he started getting pension from Haryana government (Rs.25,000/-) and Rs.15,000/- from the Government of India.. Besides there is entitlement for free travel etc. He is quite contented with his life and takes pride to have been part of the Azad Hind Fauj and speaks up the words of Subhash Bose with great pride and enthusiasm. After the death of his elder brother Surat Singh, he looked after his family and he is enjoying the evening of his life a contented man among his grandchildren and fellow old colleagues in his native place.

Date of Pubn. : 30.04.2016 Posted at - NIE - H.O. Postal Date : 2-3 May. 2016
RNI Reg. No. DELBIL/2007/22062 Postal Regd. No. DL(W) 10/2143/2014-2016

हिरण्मयेन पात्रेण सत्यस्यापिहितं मुखम्।
तत् त्वं पूषन्नपावृणु सत्यधर्माय दृष्टये।। यजु.10/17
ऋषिः-दीर्घतमा, देवता-आत्मा, छन्दः-अनुष्टुप्

हे पूषन् (आत्मा)! सत्यरूपी अमृतघट का मुँह प्रलोभनों के सुनहरे सुन्दर आवरण से ढका हुआ है। यदि तू सत्यधर्म को जानना चाहता है तो उस आवरण को हटा दे। इस मन्त्र में मनुष्य को कर्म करते हुए जीवन व्यतीत करने का आदेश दिया गया है।

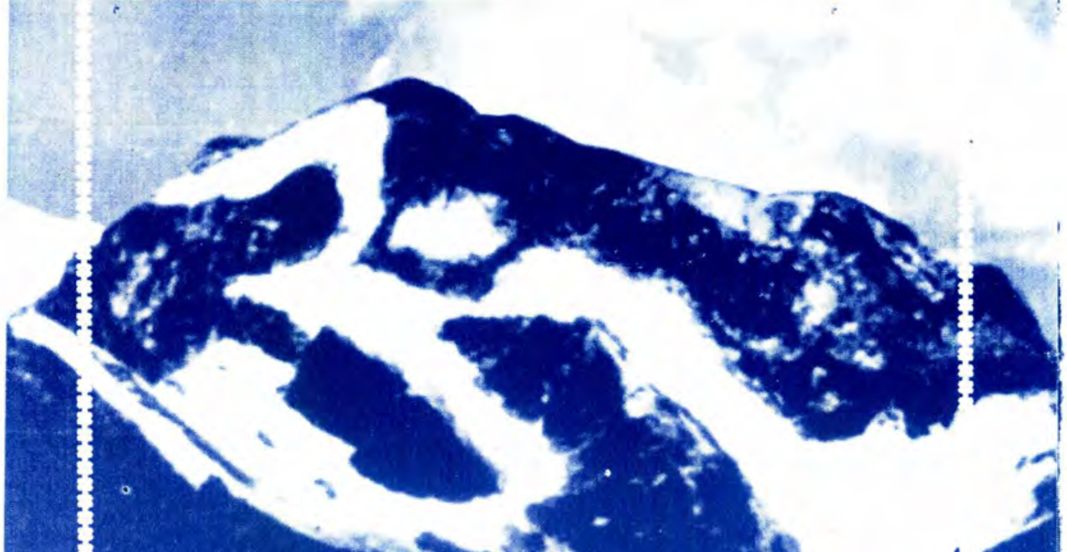

The face of truth is covered by a golden veil And that is why we do not see it. Oh Lord of light do away this veil to enable us to sea the truth in all its resplendence and purity.

Printed by - Friendsprintofast, New Delhi-58